

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 9: भीष्म का देहत्याग

11 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



कुरुक्षेत्र में शरशय्या पर लेटे पितामह भीष्म श्रीकृष्ण पर अपनी दृष्टि टिकाये हुए हैं और अपनी अन्तिम श्वास तक भगवान् की स्तुति करते हुए अपना नश्वर शरीर त्याग देते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

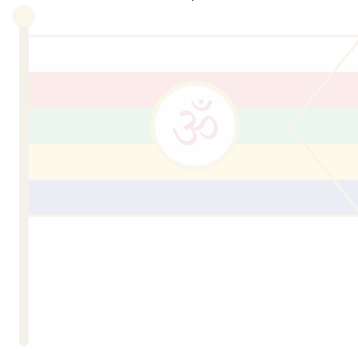
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विजडम् में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिमयी यात्रा। युद्ध समाप्त हो चुका है, अन्त्येष्टि-क्रियाएँ सम्पन्न हो गई हैं, और एक महान् आत्मा अब भी रणभूमि पर विद्यमान है। कुरु-वंश के पितामह भीष्म अपनी ही इच्छा से शरशय्या पर लेटे, प्रस्थान के शुभ मुहूर्त की प्रतीक्षा कर रहे हैं। प्रथम स्कन्ध के इस नवम अध्याय में राजा युधिष्ठिर सनातन धर्म की

शिक्षा पाने उनके पास आते हैं, ऋषियों का एक विशाल समूह उन्हें घेर लेता है, और वह मरणासन्न पितामह — श्रीकृष्ण को अपने नेत्रों के समक्ष खड़ा पाकर — समस्त शास्त्र की सबसे दीप्तिमान मृत्यु-शय्या-स्तुतियों में से एक प्रकट करते हैं। यहाँ हम एक योद्धा को सन्त बनते देखते हैं, और एक ऐसे पुरुष को, जो युगों तक जिया, अपना सर्वस्व भगवान् के चरणों में रखते देखते हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 1 (प्रथम स्कन्ध)
- अध्याय: 9 (नवम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: भगवान् श्रीकृष्ण की उपस्थिति में भीष्म का देहत्याग
- प्रमुख वक्ता: पूज्य सूत जी, उग्रश्रवा (कथावाचक); पितामह भीष्म (देवव्रत)
- प्रमुख श्रोता: राजा युधिष्ठिर तथा एकत्रित ऋषिगण; समग्र कथा नैमिषारण्य के ऋषियों को, शौनक जी के नेतृत्व में, सुनाई जा रही है
- मुख्य स्थल: कुरुक्षेत्र (विनशन) का रणक्षेत्र, तत्पश्चात् हस्तिनापुर
- केन्द्रीय विषय: युधिष्ठिर और पाण्डव, श्रीकृष्ण के साथ, शरशय्या पर लेटे भीष्म के पास जाते हैं; भीष्म राजा को धर्म की शिक्षा देते हैं और, भगवान् पर दृष्टि टिकाये, उनकी स्तुति करते हुए देह त्याग देते हैं
- प्रमुख श्लोक-परास: स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 1–49
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय से सन्दर्भ

अष्टम अध्याय में शोकाकुल परिवार ने गंगा-तट पर अपने मृतकों को जल अर्पित किया। वहाँ गर्भवती उत्तरा भय से श्रीकृष्ण की ओर दौड़ी, और भगवान् ने अश्वत्थामा के अमोघ अस्त्र से उसके गर्भ के शिशु की रक्षा की, तथा भावी सम्राट परीक्षित के रूप में कुरु-वंश को अक्षुण्ण रखा। महारानी कुन्ती ने अपनी अनुपम स्तुति प्रकट की, विपत्ति का स्वागत करती हुई ताकि वे भगवान् को कभी न भूलें; और राजा युधिष्ठिर उस पश्चात्ताप में डूब गये जिसे कृष्ण की सान्त्वना भी नहीं हर सकी। इसी शोक से भारग्रस्त राजा के साथ नवम अध्याय आरम्भ होता है।

कुरुक्षेत्र की यात्रा

युद्ध में मानवता के प्रति हुए अपराधों से हृदय में अब भी व्यथित, और समस्त सनातन धर्मों का ज्ञान पाने की इच्छा से, राजा युधिष्ठिर विनशन — कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र — की ओर चले, जहाँ देवव्रत, पितामह भीष्म, शरशय्या पर लेटे थे। उनके सभी विख्यात भाई स्वर्ण-मण्डित एवं उत्तम अश्वों से जुते रथों पर उनके पीछे चले, और उनके साथ थे ऋषि व्यास, कुलपुरोहित धौम्य, तथा अन्य।

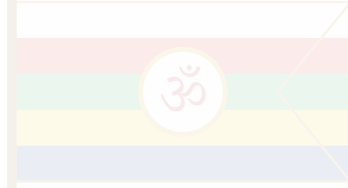


राजा युधिष्ठिर और उनके भाई, श्रीकृष्ण तथा ऋषियों के साथ, भीष्म का परामर्श पाने कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र की ओर प्रस्थान करते हैं।

स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण धनञ्जय (अर्जुन) के साथ एक रथ पर चले; और उन सबके मध्य राजा युधिष्ठिर उतने ही देदीप्यमान थे जितने अपने गुह्यक-अनुचरों से घिरे यक्षराज कुबेर। भीष्म को भूमि पर स्वर्ग से गिरे किसी देवता के समान लेटे देखकर, पाण्डवों और उनके अनुचरों ने, और उनके साथ श्रीकृष्ण ने, उन्हें प्रणाम किया।

ऋषियों का महान् समागम

भीष्म का देहत्याग कोई एकान्त प्रसंग नहीं था, क्योंकि वे भरतवंशियों में श्रेष्ठ थे। उस समय पवित्र पुरुषों का एक विशाल समूह उन्हें देखने रणभूमि पर एकत्र हो गया था — ब्रह्मर्षि, देवर्षि और राजर्षि, सब एक साथ।



ब्रह्मर्षि, देवर्षि और राजर्षियों का एक महान् समूह शरशय्या पर लेटे भीष्म को घेरकर एकत्र होता है।

वहाँ थे पर्वत और नारद, धौम्य और दिव्य बादरायण (व्यास); बृहदश्व, भरद्वाज और रेणुका-पुत्र परशुराम, प्रत्येक अपने शिष्यों सहित; वसिष्ठ, इन्द्रप्रमद, त्रित, गृत्समद, असित, कक्षीवान्, गौतम, अत्रि और विश्वामित्र; सुदर्शन तथा ब्रह्मरात (शुक) जैसे अन्य पवित्र ऋषि, और कश्यप तथा अंगिरा भी, सब अपने शिष्यों सहित पधारे। इन परम भाग्यशाली आत्माओं को वहाँ एकत्र देखकर, सदाचार के सिद्धान्तों के ज्ञाता भीष्म ने देश और काल का समुचित ध्यान रखते हुए उन्हें सम्मान दिया। और श्रीकृष्ण की महिमा को जानते हुए — जो जगत् के ईश्वर हैं, जिन्होंने अपनी माया से एक साकार रूप धारण किया था, जो उनके समक्ष विराजमान थे और साथ ही उनके हृदय में भी अधिष्ठित थे — भीष्म ने उन्हें अपनी वन्दना अर्पित की।

कृष्णं च तत्प्रभावज्ञ आसीनं जगदीश्वरम् ।

हृदिस्थं पूजयामास माययोपात्तविग्रहम् ॥ १० ॥

kṛṣṇaṁ ca tat-prabhāva-jña āsīnaṁ jagad-īśvaram hṛdi-sthaṁ pūjayām āsa māyayopātta-vigrahaṁ

अर्थ: उनकी महिमा को जानते हुए भीष्म ने श्रीकृष्ण की पूजा की — जो जगत् के ईश्वर हैं, जो अपनी दिव्य शक्ति से धारण किये रूप में उनके समक्ष विराजमान थे, और जो उसी क्षण उनके हृदय के भीतर भी निवास कर रहे थे। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 10)

भीष्म के सान्त्वना-वचन और काल का शासन

तब, स्नेह के आँसुओं से नेत्र धुँधले किये, भीष्म ने अपने पास बैठे पाण्डुपुत्रों की ओर देखा, जो विनय और प्रेम से परिपूर्ण थे, और उनसे कोमल वचन कहे। कितना कष्टकर और कितना अन्यायपूर्ण रहा, उन्होंने कहा, कि वे — जो साक्षात् धर्म की सन्तान हैं, ब्राह्मणों के, धर्म के, और भगवान् अच्युत के अनुरागी हैं — ऐसे घोर कष्ट का जीवन जियें, जिसके वे किसी भी प्रकार पात्र न थे। जब महान् पाण्डु ने अन्तिम श्वास ली तब वे सब अल्पवय के थे, और उनकी माता पृथा ने उनके निमित्त अनेक कष्ट सहे।



स्नेह के आँसुओं सहित भीष्म पाण्डवों को सान्त्वना देते हैं, यह शिक्षा देते हुए कि उनके समस्त शोक काल के ही विधान थे (श्लोक 14)।

ये सब अवांछित अनुभव, भीष्म ने उन्हें बताया, काल के — विधाता के अदृश्य हाथ के — विधान थे; क्योंकि समस्त संसार अपने लोकपालों सहित काल के अधीन है, ठीक वैसे ही जैसे मेघ वायु के अधीन।

सर्व कालकृतं मन्ये भवतां च यदप्रियम् ।

सपालो यद्वशे लोको वायोरिव घनावलिः ॥ १४ ॥

sarvaṁ kāla-kṛtaṁ manye bhavatāṁ ca yad-apriyam sapālo yad-vaśe loko vāyor iva ghanāvaliḥ

अर्थ: मैं मानता हूँ कि जो कुछ आपके लिए अप्रिय रहा है, वह सब काल का विधान है; क्योंकि यह संसार अपने लोकपालों सहित काल के वश में है, जैसे मेघों का समूह वायु के वश में। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 14)

कितना विचित्र है, उन्होंने विस्मय किया, कि विपत्ति उस घर में आये जहाँ धर्म-पुत्र युधिष्ठिर राजा हों, जहाँ भीम गदा और अर्जुन गाण्डीव धनुष धारण करते हों, और जहाँ स्वयं श्रीकृष्ण सखा और हितैषी हों! कोई मनुष्य, उन्होंने कहा, भगवान् के अभिप्राय को कभी नहीं जान सकता; बड़े-बड़े ऋषि भी उसे खोजते हुए मोहित हो जाते हैं। इसलिए, यह निश्चित जानकर कि ये सब घटनाएँ विधाता की इच्छा पर आधारित हैं, भीष्म ने युधिष्ठिर को उसी इच्छा का अनुसरण करने और अपनी असहाय प्रजा की उनके एकमात्र सच्चे राजा के रूप में रक्षा करने का उपदेश दिया।

भीष्म का जगदीश्वर का दर्शन

तब पितामह सान्त्वना से गम्भीरतम सत्य की ओर मुड़े। श्रीकृष्ण, उन्होंने घोषित किया, साक्षात् भगवान् हैं, आदिपुरुष भगवान् नारायण से अन्य कोई नहीं। अपनी ही माया से संसार को मोहित करते हुए, वे वृष्णियों के मध्य अलक्षित विचरण करते हैं। भगवान् शिव, देवर्षि नारद और भगवान् कपिल के अतिरिक्त कोई इस कृष्ण की परम गूढ़ महिमा को नहीं जानता — जिन्हें पाण्डवों ने अपना मामा-भाई, अपना प्रिय सखा और हितैषी माना, और जिन्हें, स्नेहवश, उन्होंने अपना मन्त्री, दूत और सारथि तक बनाया। जो सबकी आत्मा हैं, प्रत्येक दृष्टि में एक-से हैं, अद्वितीय हैं और अहंकार के लेशमात्र से रहित हैं — उनमें ऊँच-नीच का कोई वास्तविक भेद हो ही नहीं सकता।

देखो, भीष्म ने कहा, उनके प्रति जो एकनिष्ठ भाव से समर्पित हैं, उन पर उनकी करुणा को: श्रीकृष्ण मेरी मृत्यु की इसी घड़ी में मेरे समक्ष साक्षात् प्रकट हुए हैं। और जो योगी अपने मन को भगवान् में स्थिर कर और जिह्वा पर उनका नाम लेकर देह त्यागता है, वह समस्त सांसारिक कामनाओं से मुक्त हो जाता है और कर्म-बन्धन से छूट जाता है।

भक्त्यावेश्य मनो यस्मिन् वाचा यन्नाम कीर्तयन् ।

त्यजन् कलेवरं योगी मुच्यते कामकर्मभिः ॥ २३ ॥

bhaktyāveśya mano yasmin vācā yan-nāma kīrtayan tyajan kalevaraṁ yogī mucyate kāmā-karmabhiḥ

अर्थ: जो योगी देह त्यागते हुए अपना मन भगवान् में तल्लीन कर देता है और अपनी वाणी से उनके नाम का कीर्तन करता है, वह समस्त स्वार्थपूर्ण कामनाओं और कर्म-बन्धन से मुक्त हो जाता है। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 23)

भीष्म ने प्रार्थना की कि वही भगवान् — जो देवताओं के लिए भी वन्दनीय हैं, चतुर्भुज हैं, जिनका कमल-मुख मनोहर मुस्कान और अरुण नेत्रों से देदीप्यमान है — तब तक उनके समक्ष विराजमान रहें जब तक वे अपना शरीर न त्याग दें।

भीष्म का राजा को धर्मोपदेश

यह सब सुनकर युधिष्ठिर ने — पितामह के शरशय्या पर लेटे रहते हुए ही — उनसे धर्म के अनेक रूपों के विषय में प्रश्न किये। और तत्त्व को जान चुके भीष्म ने उन पर एक-एक कर विवेचन किया: वर्ण और आश्रम द्वारा निर्धारित कर्तव्य; संसार में प्रवृत्ति और उससे निवृत्ति का द्विविध मार्ग; दान-धर्म, राजाओं के कर्तव्य, और मोक्ष की ओर ले जाने वाले आचरण; स्त्रियों के कर्तव्य, और भगवान् के प्रति प्रेममयी भक्ति का मार्ग। उन्होंने मानव-जीवन के चार पुरुषार्थ — धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष — का भी विवेचन किया, प्रत्येक को उपदेशप्रद कथाओं से प्रकाशित करते हुए, संक्षेप में भी और विस्तार से भी।

उत्तरायण का सूर्य और भीष्म की अन्तिम स्तुति

जब भीष्म अब भी धर्म पर विवेचन कर ही रहे थे, तभी सूर्य ने अपना उत्तरायण मार्ग आरम्भ किया — वर्ष का वह पवित्र मोड़ जिसे योगी अपने प्रस्थान के मुहूर्त के लिए चुनते हैं। अतः पितामह ने अपनी शिक्षा को विराम दिया। अपने मन को समस्त सांसारिक आसक्ति से पूर्णतया मुक्त कर, उन्होंने अपना चिन्तन और अपने अपलक नेत्र श्रीकृष्ण पर टिका दिये, जो आदिपुरुष रूप में, देदीप्यमान पीत वस्त्रों में, चतुर्भुज होकर उनके समक्ष खड़े थे। भगवान् की एक ही दृष्टि से उनके भीतर के पाप के अन्तिम अवशेष विलीन हो गये, और उनके शरीर में धँसे बाणों की पीड़ा चुपचाप जाती रही। तब, अपनी समस्त इन्द्रियों की क्रियाओं को स्थिर कर, भीष्म भगवान् जनार्दन की स्तुति करने लगे।



सूर्य के उत्तरायण होते ही भीष्म अपना मन और अपलक नेत्र चतुर्भुज श्रीकृष्ण पर टिका देते हैं और अपनी अन्तिम स्तुति आरम्भ करते हैं।

श्रीभीष्म उवाच

इति मतिरुपकल्पिता वितृष्णा

भगवति सात्वतपुङ्गवे विभूम्नि ।

स्वसुखमुपगते क्वचिद्विहर्तुं

प्रकृतिमुपेयुषि यद्भवप्रवाहः ॥ ३२ ॥

śrī-bhīṣma uvāca iti matir upakalpita vitṛṣṇā bhagavati sātvaṭa-puṅgave vibhūmni sva-sukham upagate kvacid vihartuṁ prakṛtim upeyuṣi yad-bhava-pravāhaḥ

अर्थ: भीष्म ने कहा — अब, समस्त तृष्णा से रहित होकर, मेरा मन उन सर्वव्यापी भगवान् में स्थिर हो, जो सात्वतों में श्रेष्ठ हैं, जो अपने ही आनन्द में सदा निमग्न रहते हुए भी लीलावश कभी अपनी सृजन-शक्ति का आश्रय लेते हैं — वही शक्ति जिससे समस्त संसार का प्रवाह निकलता है। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 32)

रणभूमि पर कृष्ण का स्मरण

युद्ध योद्धा की स्तुति बार-बार उस भगवान् के उस सौन्दर्य की ओर लौटती रही, जैसा उन्होंने रणभूमि पर देखा था। मेरा मन, उन्होंने प्रार्थना की, उस श्रीकृष्ण पर टिका रहे, जिनका मुख युद्ध में अश्वों के खुरों से उड़ी धूल से धूसर हो गया था, जिनके अलकावली परिश्रम की स्वेद-बूँदों से सुशोभित थे, और जिनकी त्वचा — यद्यपि चमकते कवच से ढकी थी — मेरे ही तीखे बाणों से बिंध रही थी।

युधि तुरगरजोविधूम्रविष्वक्-

कचलुलितश्रमवार्यलङ्कृतास्ये ।

मम निशितशरैर्विभिद्यमान-

त्वचि विलसत्कवचेऽस्तु कृष्ण आत्मा ॥ ३४ ॥

yudhi turaga-rajo-vidhūmra-viṣvak- kaca-lulita-śramavāry-alaṅkṛtāsye mama niśita-śarair vibhidyamāna- tvaci vilasat-kavace 'stu kṛṣṇa ātmā

अर्थ: मेरा मन उस श्रीकृष्ण पर टिका रहे, जिनका मुख रणभूमि में अश्वों के खुरों से उड़ी धूल से धूसर था, जिनके बिखरे केश स्वेद-बूँदों से सज्जित थे, और जिनकी त्वचा — चमकते कवच में होते हुए भी — मेरे ही तीखे बाणों से बिंध रही थी। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 34)

तब उन्होंने एक ऐसा क्षण स्मरण किया जिसने उनके हृदय को किसी भी बाण से गहरा बेधा था। भीष्म की अपनी रणभूमि-प्रतिज्ञा को — कि वे कृष्ण से शस्त्र उठाकर ही रहेंगे — सत्य करने के लिए, भगवान् ने युद्ध न करने की अपनी दृढ़ प्रतिज्ञा तोड़ दी थी। रथ से कूदकर और उसका एक पहिया उठाकर, वे भीष्म पर वैसे टूट पड़े जैसे सिंह किसी हाथी पर, उनके चरणों तले पृथ्वी काँप उठी और उनका उत्तरीय पीछे भूमि पर गिर पड़ा।



अपने भक्त की प्रतिज्ञा का मान रखने के लिए श्रीकृष्ण अपनी प्रतिज्ञा तोड़ देते हैं, रथ का पहिया लेकर रणभूमि पर भीष्म की ओर झपटते हुए (श्लोक 37)।

स्वनिगममपहाय मत्प्रतिज्ञा-

मृतमधिकर्तुमवप्लुतो रथस्थः ।

धृतरथचरणोऽभ्ययाच्चलद्गु-

ह्रिरिव हन्तुमिभं गतोत्तरीयः ॥ ३७ ॥

sva-nigamam apahāya mat-pratijñām ṛtam adhikartum avapluto rathasthaḥ dhṛta-ratha-caraṇo 'bhyayāc caladgur harir iva hantum ibhaṁ gatottariyaḥ

अर्थ: मेरी प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिए अपनी प्रतिज्ञा त्यागकर, वे रथ से कूद पड़े, उसका पहिया उठा लिया, और मुझ पर वैसे झपटे जैसे सिंह हाथी को मारने के लिए झपटता है — उनके पगों तले पृथ्वी काँपती हुई और उनका उत्तरीय पीछे गिरता हुआ। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 37)

मुझ-जैसे आततायी के तीखे बाणों से आहत, उनका कवच टूटा हुआ और उनका शरीर रक्त से सना हुआ, वे भगवान् अर्जुन के रोकने की भी अवहेलना कर मुझे मारने चले आये थे। वही भगवान् मुकुन्द, कल्याण के दाता, भीष्म ने प्रार्थना की, मेरी एकमात्र शरण हों।

शितविशिखहतो विशीर्णदंशः

क्षतजपरिप्लुत आततायिनो मे ।

प्रसभमभिससार मद्वधार्थं

स भवतु मे भगवान् गतिर्मुकुन्दः ॥ ३८ ॥

śita-viśikha-hato viśīrṇa-daṁśaḥ kṣataja-paripluta ātatāyino me prasabham abhisasāra mad-vadhārthaṁ sa bhavatu me bhagavān gatir mukundaḥ

अर्थ: मेरे तीखे बाणों से घायल, अपना कवच टूटा और शरीर रक्त से सना, वे मुझ आततायी का वध करने के लिए बलपूर्वक आगे बढ़े — वही भगवान् मुकुन्द मेरी अन्तिम शरण हों। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 38)

उन्होंने यह भी स्मरण किया कि किस प्रकार भगवान् ने अपने सखा अर्जुन के लिए सारथि का कोड़ा और लगाम थाम ली थी, और उस विनम्र भूमिका में इतने सुन्दर लगे कि जो रणभूमि पर उन्हें निहारते हुए गिरे, उन्होंने उन्हीं का सारूप्य पा लिया; और किस प्रकार, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ऋषियों और राजाओं की सभा में, इन्हीं श्रीकृष्ण की सबसे पहले पूजा हुई थी — और किस प्रकार वही जगत् की आत्मा अब भीष्म के अपने नेत्रों के समक्ष खड़ी थी।

एक ही भगवान् प्रत्येक हृदय में

अन्ततः पितामह की दृष्टि पूर्णतया खुल गई। भेद की मूढ़ धारणा को झटककर, उन्होंने घोषित किया कि उन्होंने उस एक अजन्मा भगवान् का साक्षात्कार कर लिया है, जो एक होते हुए भी प्रत्येक देहधारी के हृदय में पृथक्-पृथक् अधिष्ठित हैं — ठीक वैसे ही जैसे एक ही सूर्य उसे देखने वाले अनेक नेत्रों को अनेक-सा प्रतीत होता है।

तमिममहमजं शरीरभाजां

हृदि हृदि धिष्ठितमात्मकल्पितानाम् ।

प्रतिदृशमिव नैकधार्कमेकं

समधिगतोऽस्मि विधूतभेदमोहः ॥ ४२ ॥

tam imam aham ajam śarīra-bhājāṃ hṛdi hṛdi dhiṣṭhitam ātma-kalpitanām pratidṛśam iva naikadhārkam ekaṁ samadhi-gato 'smi vidhūta-bheda-mohaḥ

अर्थ: द्वैत का भ्रम अब पूर्णतः समाप्त हो चुका है — मैंने उसी अनादि, अजन्मा प्रभु को पहचान लिया है जो प्रत्येक देहधारी के हृदय में पृथक्-पृथक् विराजते हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक ही सूर्य भिन्न-भिन्न नेत्रों को भिन्न प्रतीत होता है। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 42)

भीष्म का शाश्वत में प्रवेश

इस प्रकार अपने मन, वाणी और दृष्टि की समस्त क्रियाओं को जगत् की आत्मा श्रीकृष्ण में विलीन कर, पितामह ने अपने आत्मा को भगवान् के आत्मा में स्थिर किया — और भीष्म ने अन्तिम श्वास ली, उनका प्राण अनन्त आकाश में लीन हो गया।

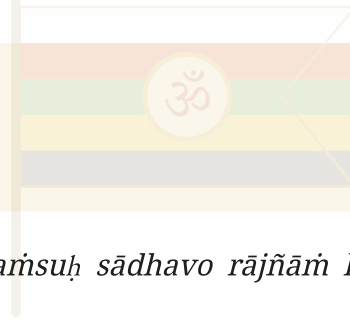


भीष्म के शाश्वत में प्रवेश करते ही दुन्दुभियाँ बज उठती हैं और कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र पर आकाश से पुष्प-वृष्टि होती है (श्लोक 45)।

यह जानकर कि भीष्म एक अखण्ड ब्रह्म में प्रवेश कर गये, वहाँ उपस्थित सब जन मौन हो गये, जैसे दिन के अन्त में पक्षी नीरव हो जाते हैं। तब दुन्दुभियाँ बज उठीं, देवताओं और मनुष्यों दोनों के द्वारा बजाई गई; श्रेष्ठ राजाओं ने साधुवाद के स्वर उठाये, और आकाश से पुष्पों की वर्षा हुई।

तत्र दुन्दुभयो नेदुर्देवमानववादिताः ।

शशंसुः साधवो राज्ञां खात्पेतुः पुष्पवृष्टयः ॥ ४५ ॥



tatra dundubhaya nedur deva-mānava-vāditāḥ śaśaṁsuḥ sādhave rājñāṁ khāt petuḥ puṣpa-vṛṣṭayah

अर्थ: तब देवताओं और मनुष्यों द्वारा बजाई गई दुन्दुभियाँ बज उठीं; साधु राजाओं ने साधुवाद कहा, और आकाश से पुष्पों की वर्षा हुई। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 45)

युधिष्ठिर ने दिवंगत पितामह की अन्त्येष्टि तथा अन्य क्रियाएँ विधिपूर्वक सम्पन्न कराई, और कुछ काल तक शोक में डूबे रहे। एकत्रित ऋषियों ने, परम आनन्द से, श्रीकृष्ण की उनके गूढ़ नामों का उच्चारण करते हुए स्तुति की; तत्पश्चात्, उन्हें अपने हृदय में धारण किये, वे अपने-अपने आश्रम को लौट गये। इसके पश्चात् युधिष्ठिर, श्रीकृष्ण के साथ, हस्तिनापुर लौटे और अपने चाचा धृतराष्ट्र तथा तपस्विनी के रूप में विख्यात अपनी चाची गान्धारी को सान्त्वना दी।

प्रमुख श्लोक

अध्याय का समापन युधिष्ठिर के अन्ततः राज्य का भार ग्रहण करने पर होता है — अपने लिए नहीं, अपितु एक पवित्र कर्तव्य के रूप में, अपने गुरुजनों और भगवान् के आशीर्वाद सहित:

पित्रा चानुमतो राजा वासुदेवानुमोदितः ।

चकार राज्यं धर्मेण पितृपैतामहं विभुः ॥ ४९ ॥

pitṛā cānumato rājā vāsudevānumoditaḥ cakāra rājyaṁ dharmeṇa pitṛ-paitāmahaṁ vibhuḥ

अर्थ: अपने चाचा की अनुमति से और वसुदेव-नन्दन श्रीकृष्ण के अनुमोदन से, उस समर्थ राजा ने अपने पितृ-पितामह के राज्य का धर्मपूर्वक शासन किया। (स्कन्ध 1, अध्याय 9, श्लोक 49)

प्रमुख शिक्षाएँ

1. काल विधाता का हाथ है। भीष्म शिक्षा देते हैं कि युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन और स्वयं कृष्ण से रक्षित घर भी शोक से नहीं बचा, क्योंकि समस्त संसार काल के वश में है, जैसे मेघ वायु के (श्लोक 14)। हमारी हानियाँ संयोग नहीं; श्रद्धा से ग्रहण की जायें तो वे हृदय को शाश्वत की ओर मोड़ देती हैं।
2. भगवान् का अभिप्राय गणना से परे है। कोई मनुष्य, और बड़े-से-बड़ा ऋषि भी, यह नहीं जान सकता कि भगवान् जैसा करते हैं वैसा क्यों करते हैं (श्लोक 16)। भक्ति वहीं आरम्भ होती है जहाँ हमारा तर्क समाप्त होता है — व्याख्या में नहीं, विश्वास में।
3. पवित्र मृत्यु भगवद्-स्थित मन का फल है। भगवन्नाम का उच्चारण करते हुए और चित्त को उन्हीं में स्थिर रखते हुए शरीर त्यागने वाला साधक समस्त बन्धन से सदा के लिए छूट जाता है (श्लोक 23)। अन्त में हम जो स्मरण करते हैं, वह उसी से गढ़ा जाता है जिसे हम अभी प्रेम करते हैं।
4. भगवान् अपने भक्त की प्रतिज्ञा को अपनी प्रतिज्ञा से ऊपर रखते हैं। भीष्म की प्रतिज्ञा सत्य करने के लिए कृष्ण ने अपनी प्रतिज्ञा त्याग दी और रथ का पहिया लेकर उन पर झपटे (श्लोक 37)। अपने प्रेमी के हाथों भगवान् की यह “पराजय” ही उनकी गहनतम महिमा है, और भीष्म ने उसी क्षण को अपनी शरण बनाया।
5. एक ही भगवान् प्रत्येक हृदय में निवास करते हैं। भेद के भ्रम को झटककर, भीष्म ने उस एक अजन्मा भगवान् का साक्षात्कार किया जो सब प्राणियों में विराजमान हैं, जैसे एक सूर्य अनेक नेत्रों को अनेक-सा दिखता है (श्लोक 42)। दिव्य में एकत्व का यह दर्शन अध्याय का शिखर है।
6. धर्म को तत्त्ववेत्ता से सीखना चाहिए। युधिष्ठिर अपना कर्तव्य स्वयं नहीं गढ़ते; वे उसे तत्त्व-ज्ञाता भीष्म से माँगते हैं, और वर्ण, आश्रम तथा चारों पुरुषार्थों का समग्र मानचित्र पाते हैं। सम्यक् आचरण प्राप्त ज्ञान पर टिका है, निजी मत पर नहीं।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

भीष्म जिस रीति से मृत्यु को वरण करते हैं, उसमें कुछ गहरा हृदयस्पर्शी है। वे अपने नेत्र मूँदकर किसी निराकार शून्य में नहीं डूबते। वे अपने नेत्र खोलते हैं और भगवान् के मुख को — धूल से धूसर, स्वेद से सज्जित, यहाँ तक कि अपने ही बाणों से क्षत — अन्त तक अपलक निहारते और प्रेम करते हैं। उनका अन्तिम ध्यान अपने दीर्घ और सम्मानित जीवन पर नहीं, न अपनी भयंकर प्रतिज्ञाओं पर, न उस राज्य पर जिसकी उन्होंने सेवा की, अपितु एक ही स्मृति पर है: वह दिन जब भगवान् ने उन्हें इतना प्रेम किया कि उनके लिए अपनी ही प्रतिज्ञा तोड़ दी। मृत्यु में यह ले जाने योग्य एक विस्मयकारी वस्तु है। यह हमें बताता है कि जीवन को जो मुक्त करता है, वह उसका कर्तव्य-लेखा नहीं, चाहे वह कितना ही

महान् हो, अपितु उसकी प्रेम-सामर्थ्य है। भीष्म ने युगों तक सेवा में जीवन बिताया; फिर भी जब उत्तरायण के सूर्य ने द्वार खोला, वे कृष्ण के अतिरिक्त कुछ भी न थामे उसमें से निकल गये। हमें शान्त भाव से पूछने का आमन्त्रण है कि उस घड़ी हम अपने नेत्रों के समक्ष कौन-सी स्मृति चाहेंगे — और उसे अभी से संचित करने का।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, भगवान् का एक नाम चुनें — कृष्ण, मुकुन्द, गोविन्द, या नारायण — और उसे दिन के साधारण क्षणों में अपनी जिह्वा पर ठहरने दें, काम करते और चलते हुए मृदु स्वर में दोहराते हुए। भीष्म सिखाते हैं कि अन्त में मन वहीं खिंचता है जहाँ जाने का उसे दीर्घकाल से अभ्यास हो। इसलिए अभी, छोटे-छोटे क्षणों में, उसी स्मरण का अभ्यास करें जिसे आप अन्त में चाहेंगे। सोने से पूर्व, एक ऐसा प्रसंग स्मरण करें जिसमें भगवान् आप पर कृपालु रहे, और उन्हें अपना धन्यवाद अर्पित करें। अभ्यास सरल और स्थिर हो; आरम्भ के लिए इतना ही पर्याप्त है।

उपसंहार

इस प्रकार श्रीमद्भागवत का नवम अध्याय समाप्त होता है, जिसे भगवत्प्राप्त जन परमहंस-संहिता कहते हैं। इस अध्याय में, श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 9 में, हमने राजा युधिष्ठिर और उनके भाइयों को, श्रीकृष्ण के साथ, कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र की ओर जाते देखा, जहाँ पितामह भीष्म शरशय्या पर लेटे थे। हमने ऋषियों का महान् समागम उन्हें घेरते देखा, उन्हें काल और विधाता की प्रज्ञा से पाण्डवों को सान्त्वना देते सुना, और राजा को समग्र सनातन धर्म की शिक्षा देते सुना। और हमने उन्हें, सूर्य के उत्तरायण होते ही, चतुर्भुज भगवान् पर अपने नेत्र टिकाकर एक अनुपम सौन्दर्य की मृत्यु-शय्या-स्तुति प्रकट करते देखा — रणभूमि पर कृष्ण का स्मरण करते हुए, उस भगवान् को अपनी एकमात्र शरण बनाते हुए जिन्होंने प्रेमवश अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी, और अन्ततः उस एक भगवान् का साक्षात्कार करते हुए जो प्रत्येक हृदय में निवास करते हैं। तब, अपना मन पूर्णतया भगवान् में विलीन किये, पितामह ने दुन्दुभियों के घोष और पुष्पों की वर्षा के मध्य अन्तिम श्वास ली, और युधिष्ठिर ने अपने पितृ-पितामह के सिंहासन को धर्मपूर्वक ग्रहण किया। हम इस योद्धा-सन्त से सीखें कि अन्त तक भगवान् के मुख को अपने नेत्रों के समक्ष रखें।

श्रीमद्भागवत का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाये।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ और आभार

मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण, प्रथम स्कन्ध, नवम अध्याय, ग्रन्थ पृष्ठ 32-37।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट। पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं संस्तुति के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेख एक मौलिक, श्रद्धामय भक्तिपूर्ण पुनर्कथन है (Copyright MODE B)। किसी प्रकाशक का अनुवाद या टीका पुनरुत्पादित नहीं की गई; श्लोकों के “अर्थ” मौलिक श्रद्धामय भावानुवाद हैं। यह लेख किसी प्रकाशक या संस्था के प्रायोजन/समर्थन का संकेत नहीं करता।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-1-chapter-9-passing-of-bhishma-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

